मुहक़्क़िक़ाना फ़ैसला

मुफ्ती जलालुद्दीन अहमद अमजदी



आठ मस्लों का

मुहक़्क़िक़ाना फ़ैसला

लेखक

फ़क़ीहे मिल्लत

मुफ़्ती जलालुद्दीन अहमद अमजदी

बानी- दारुल ऊलूम अमजदिया अरशदुल ऊलूम

ओझागंज, ज़िला बस्ती (उ.प्र.)

विषय-सूची

पहली नज़र

हिन्दुस्तान में जबकि हिन्दी ज़ुबान बहुत ज़ियादा रवाज पा गई और नई नस्ल में उर्दू जानने वाले कम रह गये तो दूसरे लोगों ने अपनी मज़हबी किताबों को फ़ौरन हिन्दी में करके पूरे मुल्क में फैला दिया। मगर इसकी तरफ सुन्नी हज़रात ने कोई तवज्जुह नहीं की तो उसका असर यह हुआ कि बहुत से लोग जो उर्दू नहीं पढ़े थे और हिन्दी जानते थे उनकी किताबों को पढ़ कर गुमराह हो गये। और दिन ब दिन गुमराह होते जा रहे हैं।

तो सुन्नी आ़लिमों में सबसे पहले उसताज़े ग्रामी हज़रत अ़ल्लामा मुफ़्ती जलालुद्दीन अह़मद साहिब क़िबला अमजदी ने इसकी तरफ़ तवज्जुह फ़रमाई। मुझे हुक्म दिया मैंने उनकी लिखी हुई किताब उर्दू अनवारे शरीअ़त जिसमें अक़ीदा, हर क़िस्म की नमाज़, ज़कात, रोज़ह और निकाह़ व तलाक़ वग़ैरह का बयान है। हिन्दी में कर दी। जो अल्लाह के फ़ज़्ल से अब तक कई एडीशन छपकर हिन्दी जानने वाले अ़वाम अहलिसुन्नत में बहुत ज़ियादह मक़बूल हुई।

अब हज़रत के हुक्म से हमने उनकी लिखी हुई दूसरी किताब जो आठ मसलों का "मुहक़्क़िक़ाना फ़ैसला" है हिन्दी में

कर दी। उम्मीद कि यह किताब भी हिन्दी जानने वालों में बहुत पसन्द की जायेगी।

इसके बाद हज़रत मुफ़्ती साहब क़िबला की मशहूर किताब अनवारुल ह़दीस जो 554 ह़दीसों और 474 मसलों का मजमूअ़ा है इस को भी हिन्दी में करने का प्रोग्राम है। ख़ुदाय तअ़ाला तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये और हमारी सब दीनी ख़िदमतों को क़बूल फ़रमाये। आमीन।

मु० अलाउद्दीन साबिर
ओझागंज—जि० बस्ती
3, जुमादलऊला 1405 हिजरी
25 जनवरी 1985 ईसवी

बिदअ़त का बयान

लुग़त में नई चीज को बिदअ़त कहते हैं। और शरा की बोली में बिदअ़त वह चीज़ है जो हुज़ूर सल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहिवसल्लम के ज़माना के बाद हुई। हज़रत मुल्ला अ़लीक़ारी रह़मतुल्लाहि तआ़ला अलैहि लिखते हैं कि इमाम नौवी रह़मतुल्लाहितआ़ला अ़लैहि ने फ़रमाया-ऐसी चीज़ जिसकी मिसाल पहले ज़माने में न हो (लुग़तमें) उसको बिदअ़त कहते हैं। और शरा में बिदअ़त यह है कि किसी ऐसी चीज़ का ईजाद करना जो हुज़ूर अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़ाहिरी ज़माना में न थी। (मिरक़ात जिल्द १ पृष्ठ १७९)

बिदअ़त ह़सना भी होती है और सय्यिआ भी होती है। हज़रत शैख़ अब्दुलह़क़ मुह़द्दिस देहलवी बुख़ारी रह़मतुल्लाहितआ़ला अ़लैहि फ़रमाते हैं। जो बिदअ़त कि हुज़ूर की सुन्नत के उसूल व क़वा इ़द के

मुताबिक़ है और उसी पर क़ियास की गई है उसको बिदअ़ते हसना कहते है। और जो बिदअ़त कि सुनन्त के मुख़ालिफ़ हो उसे बिदअ़ते गुमराही कहते हैं।

(अशिअ़तुल्लमअ़ात जिल्द १ पृष्ठ १२५)

और सरकारे अक़दस स़ल्लल्लाहु तआ़ाला अ़लैहि वसल्लम ने फ़रमाया जो शख़्स इस्लाम में किसी अच्छे तरीक़ा को राइज करेगा तो उसको अपने राइज करने का सवाब मिलेगा और उन लोगों के अ़मल करने का भी जो उसके बाद उस तरीक़ा पर अ़मल करते रहेंगे। और अ़मल करने वालों के सवाब में कोई कमी भी न होगी और जो इस्लाम में किसी बुरे तरीक़ा को राइज करेगा तो उस शख़्स पर उसके राइज करने का भी गुनाह होगा और उन लोगों के अ़मल करने का भी गुनाह होगा जो उसके बाद उस तरीक़ा पर अ़मल करते रहेंगे—और अ़मल करने वालों के गुनाह में कोई कमी न होगी। (मुस्लिम, मिश्कात सफ़्हा ३३)

इस ह़दीस शरीफ़ से भी मालूम हुआ कि बिद-अ़त हसना भी होती है और सय्यिआ भी—बिदअ़ते ह़सना का इनकार करना इस ह़दीस शरीफ़ का

इनकार करना है—अल्लामा इब्ने आबिदीन शामी रह़मतुल्लाहितआ़ला अ़लैहि लिखते हैं।

उ़लमा ने फ़रमाया—यह ह़दीसें इस्लाम के क़ानून हैं कि जो शख़्स कोई बुरी बिदअ़त ईजाद करे उस पर उस काम में सारे पैरवी करने वालों का गुनाह है और जो शख़्स कि अच्छी बिदअ़त निकाले उसको क़ियामत तक के सारे पैरवी करने वालों का सवाब है। (रद्दुल मुह़तार जिल्द २ सफ़ाह़ा ८०)

बिदअ़त की पाँच क़िस्में

बिदअ़त की कुल पाँच क़िस्में हैं।

बिदअ़ते वाजिबा, बिदअ़ते मुस्तह़ब्बा, बिदअ़ते मुह़र्रमा, बिदअ़ते मकरूहा, और बिदअ़ते मुबाह़ा,

बिदअ़ते वाजिबा : वह नई चीज़ जो शरअ़न मना न हो और उसके छोड़ने से दीन का नुक़सान हो जैसे क़ुरआन व ह़दीस समझने के लिए इ़ल्मे नह़्व का सीखना और गुमराह फ़िरक़ों पर रद के लिए दलाइल क़ाइम करना।

बिदअ़तेमुस्तह़ब्बा

वह नई चीज़ जो शरीअ़त में मना न हो और उसको आ़म मुसलमान कारे सवाब जानते हों। उसका करने वाला सवाब पायेगा और न करने वाला गुनहगार नहीं होगा। जैसे मदरसों की तामीर करना और अज़ान के बाद स़लात पुकारना। दुर्रे मुख़्तार बाबुल अज़ान में है कि अज़ान के बाद अस़्स़लातु वस्सलामु अ़लैक या रसूलल्लाहि पढ़ना माहे रबीउ़ल आख़र सन् ७८१ हिजरी में जारी हुआ और वह बिदअ़ते ह़सना है।

बिदअ़तेमुह़र्रमा

वह नई चीज़ जिससे दीन को नुक़सान पहुंचे। जैसे अहले सुन्नत व जमाअ़त के ख़िलाफ़ नये अक़ीदा वालों के मज़हब

बिदअ़तेमकरूहा : वह नई चीज़ जिससे कोई सुन्नत छूट जाये जैसे जुमा व ई़दैन का ख़ुतबा अ़रबी के इ़लावा किसी दूसरी ज़ुबान में पढ़ना, और ख़ुतबा की अज़ान मस्जिद के अन्दर देना।

बिदअ़ते मुबाह़ा

वह नई चीज़ जिसके करने न करने पर सवाब व अ़ज़ाब न हो जैसे अच्छे-अच्छे खाने खाना और रेलगाड़ी वग़ैरा में सफ़र करना।

बिदअ़त की मज़कूरा बाला पाँच क़िस्में हैं। उस पर दलील मुलाहज़ा हो। ह़ज़रत मुल्ला अ़लीक़ारी अ़लैहि रह़मतुल्लाहिल बारी लिखते हैं कि ह़ज़रत शैख़ इज़्ज़ुद्दीन ने किता बुलक़वाइद के आख़िर में फ़रमाया। बिदअ़त या तो वाजिब है जैसे अल्लाह और उसके रसूल के कलाम को समझने के लिए इल्मे नह्व सीखना और जैसे उसूले फ़िक़ह और अस्माउर्रिजाल के फ़न को मुरत्तब करना, और बिदअ़त या तो ह़राम है जैसे जबरिया, क़दरिया, मुरजिआ। मुजस्सिमा का मज़हब। और उन मज़हबों का रद करना बिदअ़ते वाजिबा से है इसलिए कि उनके अ़क़ाइदे बातिला से शरीअ़त की हिफ़ाज़त फ़र्ज़ किफ़ाया है। और बिदअ़त या तो मुस्तह़ब है जैसे मुसाफ़िरख़ानों और मदरसों की तामीर करना और हर वह नेक काम जिसका रवाज इब्तिदाई दौरे इस्लाम में नहीं था। और जमाअ़त के साथ तरावीह और सूफ़ियाये किराम के

दक़ीक़ व बारीक मसाइल में गुफ़तगू और बिदअ़त या तो मकरूह है जैसे शाफ़िइया के नज़दीक क़ुर्आन मजीद की तज़ईन और मसाजिद का नक़्श व निगार-और यह ह़नफ़ीया के नज़दीक बिला कराहत जाइज़ है। और बिदअ़त या तो मुबाह़ है जैसे सुबह़ और अ़स्र की नमाज़ के बाद मुसाफ़ह़ा करना और लज़ीज़ खाने पीने और रहने की जगहों में कुशादगी इख़तियार करना और कुरते की आसतीनों को लम्बी रखना। (मिरक़ात शरह़ मिशकात जिल्द १ सफ़ह़ा १७९)

और ह़ज़रत शैख़ अ़ब्दुल ह़क़ मुह़द्दिस देहलवी बुख़ारी रह़मतुल्लाहितआ़ला अ़लैह लिखते हैं कि बाज़ बिदअ़तें वाजिब हैं जैसे इ़ल्मे नह़्वसर्फ़ का सीखना और सिखाना कि उससे आयतों और ह़दीसों के मतलब की पहचान ह़ासिल होती है। और क़ुर्आन व सुन्नत के ग़राइब का मह़फ़ूज़ करना और दूसरी चीजें कि दीन व मिल्लत की ह़िफ़ाज़त उन पर मौक़ूफ़ है। और बाज़ बिदअ़तें मुस्तह़सन व मुस्तह़ब हैं जैसे सराय व मदरसों की तामीर। और बाज़ बिदअ़तें मकरूह हैं जैसे कि बाज़ के क़ौल पर क़ुर्आन मजीद और मस्जिदों में नक़्शवनिगार करना और बाज़ बिदअ़तें मुबाह़ हैं जैसे कि उमदा कपड़ों का पहिनना और अच्छे-

अच्छे खाने खाना बशर्ते कि ह़लाल हों और गुरूर का सबब न हों। और दूसरी मुबाह़ चीजें जो ह़ुज़ूर अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़ाहिरी ज़माना में न थीं। जैसे छलनी वग़ैरा। और बाज़ बिदअ़तें ह़राम हैं जैसे कि अहलेसुन्नत व जमाअ़त के ख़िलाफ़ नये अ़कीदों और नफ़सानी ख्वाहिशात वालों के मज़हब और जो बात ख़ुलफ़ाये राशिदीन रिज़वानुल्लाहितआ़ला अ़लैहिम अजमईन ने की है अगरचे इस माना कर कि ह़ुज़ूर स़ल्लल्लाहुतआ़ला अ़लैहिवसल्लम के ज़माना में न थी बिदअ़त है। लेकिन बिदअ़ते ह़सना कि क़िस्मों में से है बल्कि हक़ीकत में सुन्नत है (अशिअ़तुल्लम्आ़त जिल्द १ सफ़ह़ा १३५)

और ह़ज़रत अ़ल्लामा इब्ने आ़बिदीन शामी रह़मतुल्लाहितआ़ला अ़लैहि लिखते हैं कि बिदअ़त कभी वाजिब होती है जैसे गुमराह फ़िरकों पर रद के दलाइल क़ाइम करना और इ़ल्मे नह़्व का सीखना जो क़ुर्आन व ह़दीस समझने में मददगार होता हैं। और बिदअ़त कभी मुस्तह़ब होती है जैसे मदरसों और मुसाफ़िरख़ानों को तामीर करना और हर वह नेक काम करना जो इस्लाम के शुरू ज़माना में नहीं था और बिदअ़त कभी मकरूह होती है जैसे (कुछ लोगों

के नज़दीक) मस्जिदों को आरास्ता व मुज़य्यन करना और बिदअ़त कभी मुबाह़ होती है जैसे लज़ीज़ खाने-पीने और कपड़े में कुशादगी इख़्तियार करना जैसा कि मुनावी की शरह़ जामे सग़ीर में तह़ज़ीबुन्नौवी से मनक़ूल है और उसी के मिस्ल बरकिली की किताब तरीक़ये मुह़म्मदीया में है। (रद्दुलमुह़तार जिल्द १ सफ़ह़ा ३७६)

इन इबारात से अच्छी तरह ज़ाहिर हो गया कि हरबिदअ़त ह़राम नहीं होती बल्कि कुछ बिदअ़तें मुस्तह़ब और वाजिब भी होती हैं।

रही यह बात कि ह़दीस शरीफ़ में "कुल्लु बिद-अ़तिन ज़लालतुन" आया है यानी हरबिदअ़त गुमराही है तो इसके बारे में ह़ज़रत मुल्ला अ़लीक़ारी अ़लैहि रह़मतुल्लाहिलबारी लिखते हैं कि हुज़ूर अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम का क़ौल कुल्लु बिदअ़तिन ज़लालतुन आ़म मख़सूस है। यानी बिदअ़त से मुराद बिदअ़ते सय्यिआ है। (मिरक़ात जिल्द १ सफ़ह़ा १७९)

इसी तरह ह़ज़रत शैख़ अ़ब्दुलह़क़ मुह़द्दिस देहलवी बुख़ारी रह़मतुल्लाहितआ़ला अ़लैहि ने भी लिखा है। देखिए (अशिअ़तुल्लम्आ़त जिल्द १ सफ़ह़ा १२५)

बिदअ़तों का रवाज

अब बिदअ़ते ह़सना और मुबाह़ा जो आ़मतौर पर मुसलमानों में राइज हैं उनकी थोड़ी तफ़सील मुलाह़ज़ा फ़रमायें।

(१) मुसलमान बच्चों को ईमाने मुजमल और ईमाने मुफ़स्सल याद कराया जाता है। ईमान की यह दो क़िस्में और उनके यह दोनों नाम बिदअ़त हैं।

(२) कलिमों की तादाद, उनकी तरतीब और उनके नाम सब बिदअ़त हैं।

(३) क़ुर्आन शरीफ़ का तीस पारा बनाना, उन में रुकू क़ाइम करना, उस पर ज़बर, ज़ेर वग़ैरा लगाना और आयतों का नम्बर लगाना सब बिदअ़त हैं।

(४) ह़दीस को किताबी शक्ल में जमा करना, ह़दीस की क़िस्में बनाना कि यह स़ह़ीह़ है, यह ह़सन है, यह ज़ईफ़ है वग़ैरा वग़ैरा और फिर उनके अह़काम मुक़र्रर करना सब बिदअ़त हैं।

(५) उसूले ह़दीस और उसूले फ़िक़्ह के सारे क़ाइदे क़ानून बिदअ़त है।

(६) फ़िक़ह और इल्मे कलाम जिन पर आजकल दीन का दारो मदार है यह भी शुरू से आख़िर तक बिदअ़त हैं।

(७) नमाज़ में ज़ुबान से नीयत करना बिदअ़त और रमज़ान शरीफ़ में बीस रकअ़त तरावीह पर हमेशगी करना बिदअ़त है। जैसा कि ख़ुद हज़रत उमर रज़ियल्लाहुतआ़ला अनहू ने फ़रमाया कि यह बेहतरीन बिदअ़त है।

(८) रोजा की नीयत इस तरह ज़ुबान से कहना "नवयतु अन असूम ग़दन लिल्लाहितआ़ला मिनफ़रज़ि रमज़ान" और इफ्तार के वक़्त इस तरह ज़ुबान से कहना "अल्ला हुम्मलक सुमतुवबिक आ मनतु व अ़लयक तवक्कलतु वअ़लारिज कि क अफ़तरतु" दोनों बिदअ़त हैं।

(९) ज़कात में मौजूदा सिक्का अदा करना और रुपया पैसा से फ़ितरा निकालना सब बिदअ़त हैं।

(१०) जहाजों, मोटरों और लारीयों के ज़रीआ हज करना और मोटरों में अ़रफ़ात शरीफ़ जाना सब बिदअ़त हैं।

(११) शरीअ़त के चार तरीके ह़नफी, शाफ़िई, मालिकी और ह़ंबली। इसी तरह़ तरीक़त के चार सिलसिले क़ादिरी, चिश्ती, नक़्शबंदी, और सुहरवरदी सब बिदअ़त हैं। और उनके वज़ीफे, मुराक़बे, चिल्ले वग़ैरा भी बिदअ़त हैं। जिनको सब लोग दीन का काम समझकर करते हैं।

(१२) हवाई जहाज़, रेल, मोटर, टेलीवीज़न, टेलीफ़ोन, रेडियो और लाउडस्पीकर वग़ैरा सब बिदअ़त हैं। इन ईजादात को बिदअ़त न मानना जहालत व नादानी है कि शैख़ मुहक़्क़िक़ ने छलनी को बिदअ़त फ़रमाया है जैसा कि अशिअ़तुल्लम्आ़त के ह़वाला से पहले गुज़र चुका।

अब देव बंदी बतायें कि इन तमाम बिदअ़तों की मुख़ालफ़त वह क्यों नहीं करते और मीलाद व फ़ातिह़ा वग़ैरा ने उनका क्या बिगाड़ा है कि जिनकी यह मुख़ालफ़त करते हैं।

नोट :—बाज़देवबंदीलिद्दीन और फ़िद्दीन का फ़र्क़ करते हैं यानी कहते है कि दीन के लिए बिदअ़त जाइज़ है मगर दीन में बिदअ़त ईजाद करना

जाइज़ नहीं। लेकिन यह उनका खुला हुआ फ़रेब है। मुस्लिम शरीफ़ की ह़दीस जो पहले गुज़र चुकी उसमें वाज़ेह तौर पर हुज़ूर ने फ़रमाया कि दीने इस्लाम में बिदअ़ते ह़सना ईजाद करने वाला जब तक उस पर अ़मल होगा सवाब पाता रहेगा।

स़लात और सलाम

सलात व सलाम खड़े होकर पढ़ना, मीलाद शरीफ़ के ख़ातिमा पर पढ़ना और नमाज़ के बाद पढ़ना सब जाइज़ है दलील मुलाह़ज़ा हो।

ख़ुदायेतआ़ला ने कुर्आनेमजीद पारा २२ रुकू ४ में फ़रमाया। "ऐईमान वालो ! उन पर दुरूद भेजो। और सलाम पढ़ो जैसा कि सलाम पढ़ने का ह़क़ है"

और ह़ज़रते अबू हुरैरा रज़ियल्लाहुतआ़ला अ़नहु सेरिवायत है कि सरकारे अक़दस स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया। "उस शख़्स़ की नाक ख़ाक आलूद हो कि जिसके सामने मेरा ज़िक्र किया जाये और वह मुझ पर दुरूद न पढ़े (तिरमिज़ी, मिशकाव स़फ़ह़ा ८६)

और ह़ज़रते अ़ली रज़ियल्लाहुतआ़ला अ़नहू सेरिवायत है कि रसूले करीम अ़लैहिस्स़लातु वत्तस्लीम

ने इरशाद फ़रमाया कि अस्ल में बख़ील वह शख़्स है कि जिसके सामने मेरा ज़िक्र हो और वह मुझ पर दुरूद न पढ़े। (तिरमिज़ी, मिशकात सफ़हा ८७)

आयते मुबारका और अहादीसे करीमा से मालूम हुआ कि हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम पर दुरूद व सलाम भेजना ज़रूरी है और हुज़ूर के ज़िक्र के वक़्त दुरूद शरीफ़ न पढ़ना सख़्त महरूमी व बुख़ालत है और हुज़ूर की नाराज़गी का सबब है। इसीलिए मुहद्दिसीने किराम व फ़ुक़हाये इज़ाम ने फ़रमाया कि उम्र में एक बार दुरूद शरीफ़ पढ़ना फ़र्ज़ है और हर जलसये ज़िक्र में दुरूद शरीफ़ पढ़ना वाजिब है ख़्वाह ख़ुद नामे अक़दस ले या दूसरे से सुने।

शैख़ अब्दुलहक़ मुहद्दिस देहलवी बुख़ारी रहमतुल्लाहि तआलाअलैहि लिखते हैं। ख़ुदाये तआला ने मुसलमानों को हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम पर सलात व सलाम पढ़ने का हुक्म फ़रमाया है और इस बात पर इजमा है कि यह हुक्म वजूब के लिए है तो बाज़ लोगों ने कहा कि जब भी हुज़ूर का ज़िक्र शरीफ़ हो सलात व सलाम वाजिब है। और बाज़ लोग कहते हैं कि उम्र में एक बार फ़र्ज़ है जैसे

कि ह़ुज़ूर स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम की नुबूवत की गवाही देना और उससे ज़्यादा मुस्तह़ब व मसनून है। और इस्लाम व शिआ़रे इस्लाम की सुन्नतों में सबसे ज़्यादा मुअक्कद है।

क़ाजी अबूबकर अ़लैहिर्रह़मह ने फ़रमाया कि ख़ुदाये तआ़ला ने ह़ुज़ूर अ़लैहिस्स़लातु वस्सलाम की बारगाह में स़लात व सलाम पढ़ने को मुसलमानों पर फ़र्ज़ किया और उसके लिए कोई वक़्त मुक़र्रर नहीं फ़रमाया लिहाज़ा वाजिब है कि सलात व सलाम बहुत पढ़ा जाये और उससे ग़फ़लत न बरती जाये। (अशिअ़तुल्लम्आ़त जिल्द १ स़फ़ह़ा ४०४)

और दुर्रेमुख़्तार में है कि "इस बात पर इत्तिफ़ाक़ है कि उ़म्र में एक बार दुरूद व सलाम पढ़ना फ़र्ज़ है और हर बार ज़िक्रे रसूल के वक्त दुरूद व सलाम वाजिब होने में इख़्तिलाफ़ है। और मुख़्तार यह है कि हर बार ज़िक्रे रसूल के वक़्त वाजिब है।

इन इ़बारतों से अच्छी तरह़ ज़ाहिर हो गया कि जब भी सरकारे अक़्दस स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम का ज़िक्र हो स़लात व सलाम पढ़ना वाजिब है यानी न पढ़ना गुनाह है।

रहा यह सुवाल कि जब खड़े होकर सलात व सलाम पढ़ने का हुक्म नहीं है तो फिर खड़े होकर क्यों पढ़ा जाता है ? तो इसका जवाब यह है कि अगर खड़े होकर पढ़ने का हुक्म नहीं है तो बैठ कर भी पढ़ने का हुक्म नहीं है तो चाहिए कि बैठ के भी न पढ़ा जाये तो फिर कैसे पढ़ा जाये ? आख़िर मानना पड़ेगा कि ख़ुदाये तआला का हुक्म मुतलक़ है यानी सलात व सलाम पढ़ने के लिए कोई हैअत मुक़र्रर नहीं है। इसीलिए अहलेसुन्नत व जमाअ़त महफ़िले मीलादे शरीफ़ में बैठकर पढ़ते हैं और मीलादे शरीफ़ के ख़त्म पर खड़े होकर पढ़ते हैं ताकि दोनों तरह सआदत हासिल हो जाये। इसलिए कि जब हुक्म मुतलक़ है तो इख़्तियार है जिस तरह चाहें पढ़ें।

एलावा इसके आयते करीमा में सलाम के मुत-अ़ल्लिक़ जो अल्फ़ाज़ हैं उनका मतलब यह है कि सलाम पढ़ो जैसा कि सलाम पढ़ने का हक़ है। यानी अदब के साथ पढ़ो। और हमारे उ़र्फ़ में खड़े होकर सलाम पढ़ना ताज़ीम है मगर हर बार खड़ा होना कठिन है इसलिए सिर्फ़ ज़िक्रे विलादत के वक़्त सलाम

पढ़ने को खड़े हो जाते है। कि इसमें सरकारे अक़्दस स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम की ताज़ीम है। और ताज़ीम का यह त़रीक़ा अ़रब व अ़जम में हर जगह राइज है जिसे फ़ुक़हायकिराम ने मुस्तह़ब व मुस्तह़सन फ़रमाया है।

आ़लिमे कामिल ह़ज़रते उ़समान ह़सन दमियाती अ़लैहिर्रह़मह अपनी किताब इस बाते क़ियाम में तह़रीर फ़रमाते है कि ज़िक्रे बिलादत सय्यिदुलमुरसलीन स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम के वक्त खड़ा होना बेशक मुस्तह़ब व मुस्तह़सन है जिसके करने वाले को सवाबे कबीर व फ़ज़्लेकसीर ह़ासिल होगा कि वह ताज़ीम है। यानी उस नबीये करीम स़ाह़िबे ख़ुल्के अज़ीम अ़लैहिस्स़लातु वस्सलाम की ताज़ीम है। ज़िनकी बरकत से खुदाये तआ़ला हमें कुफ़्र की अंधेरियों से ईमात की रौशनी की तरफ़ लाया और उनके सबब हमें जहालत के दोज़ख से बचा कर मारिफ़त व यकीन की जन्नतों में दाख़िल फ़रमाया। तो ह़ुज़ूर स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम की ताज़ीम करना रब्बुल आ़लमीन की ख़ुशी की तरफ़ दौड़ना है और क़वी तरीन शिआ़रेदीन का इज़हार करना है।

ख़ुदाये तआ़ला ने फ़रमाया "और जो अल्लाह तआ़ला के शआ़इर की ताज़ीम करे तो वह दिलों की परहेज़गारी से है" (पारा १७ रुकू ११)

और ख़ुदायेतआ़ला ने फ़रमाया "और जो अल्लाह तआ़ला की हुरमतों की ताज़ीम करे तो वह उसके लिए उसके रब के यहां बेहतर है" (पारा १७ रुकू ११)

और ज़ैनुल ह़रम ह़ज़रत सय्यिद अहमद ज़ैन दह़लान मक्की अ़लैहिर्रहमतु वर्रिज़वानु, अद्दुररुस्सुन्नियह, में तह़रीर फरमाते हैं कि वलादते अक़दस के ज़िक्र के वक़्त खड़ा होना और महफ़िले मीलाद के ह़ाज़िरीन को खाना वग़ैरा देना और उनके सिवा दूसरी नेकी की बातें जो मुसलमानों में राइज हैं तो वह सब ह़ुज़ूर स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम की ताज़ीम से हैं।

और जो बहुत से मुक़ामात पर बादे नमाज़ स़लात व सलाम पढ़ते हैं वह भी बेहतर है। ह़दीस शरीफ़ में है कि ह़ज़रत अ़ब्दुल्लाह इबने मस्ऊ़द रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू ने नमाज़ से फ़ारिग़ होकर दुरूद और सलाम पढ़ा। तो ह़ुज़ूर ने फ़रमाया 'दुआ़

कर क़बूल की जायेगी। दुआ कर क़बूल की जायेगी'
(तिरमिज़ी, मिश कात सफ़हा ८७)

और वक़्त की तख़सीस में कोई ह़रज नहीं। मिशकात शरीफ़ किताबुल इल्म सफ़हा ३३ में है कि—ह़ज़रत शक़ीक़ रज़ियल्लाहु तआला अनहू ने फ़रमाया कि ह़ज़रत अब्दुल्लाह इबने मसऊद रज़ियल्लाहु तआला अनहू हर जुमेरात को वाज़ फरमाते थे। (बुख़ारी, मुस्लिम)

ह़ज़रत मुल्ला अलीक़ारी इस ह़दीस कि शरह़ में फ़रमाते हैं "ग़ालिबन जुमेरात की तख़सीस की वजह यह है कि उसकी बरकत जुमा के दिन तक पहुंचे। (मिरक़ात जिल्द १ सफ़हा २२५)

तो ग़ालिबन बादे नमाज़ सलात व सलाम की तख़सीस की वजह यह है कि जब उसके बाद कारोबार के लिए निकले तो सलात व सलाम की बरकत उसके साथ रहे।

मिशकात बाबुस्सलात अलन्नबी सफ़्हा ८७ में है हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम ने फ़रमाया कि जिबरईल अलैहिस्सलाम ने मुझ से कहा—क्या मैं

आपको इस बात की ख़ुश ख़बरी न दूँ कि अल्लाह अज़्ज़ व जल्ल फ़रमाता है कि जो शख़्स आप पर दुरूद भेजेगा मैं उस पर रह़मत भेजूंगा और जो शख़्स आप पर सलाम पढ़ेगा मैं उस पर सलामती नाज़िल करूंगा। (अह़मद)

इसके एलावह जब किसी काम के लिए कोई वक़्त मुक़र्रर होता है तो उस वक़्ते ख़ास में वह अदा होता रहता है वरना आदमी भूल जाता है इसीलिए लोग अपने कामों के लिए वक़्त मुक़र्रर करते हैं अगर वक़्त मुक़र्रर करने की वजह से सलात व सलाम नाजाइज हो जाये तो इस क़ानून की रूसे हर काम जो वक़्ते मुक़र्ररा पर किया जाता है सबको नाजाइज़ होना चाहिए।

मुख़ालिफ़ीन के पीर हाजी इम्दादुल्लाह साह़ब मुहाजिर मक्की लिखते हैं "यह बात तजरबा से मालूम होती है कि जो अम्र किसी ख़ास वक़्त मालूम पर हो उस वक़्त वह याद आ जाता है और ज़ुरूर हो रहता है और नहीं तो सालहा साल गुज़र जाते हैं कभी ख़्याल भी नहीं होता। इस क़िस्म की मस्लहतें हर अम्र में हैं जिनकी तफ़सील तवील है (फ़ैसला हफ़्त मसला सफ़ह़ा ७)

इन तमाम दलिलों से अच्छी तरह ज़ाहिर हो गया कि खड़े होकर सलात व सलाम पढ़ना हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम के ज़िक्रेविलादत के वक्त खड़ा होना और महफ़िले मीलाद के आख़िर में या नमाज़ के बाद सलात व सलाम पढ़ना जाइज़ व मुसतहसन और बाइसे बरकत है। उनको शिर्क व कुफ़्र कहना गुमराही व बद मज़हबी है।

मुख़ालिफ़ीन के पीर हाजी इम्दादुल्लाह साहब लिखते हैं "मशरब फ़कीर का यह है कि महफ़िले मौलूद शरीफ़ में शरीक होता हूं बल्कि ज़रिअ़ऐ बर-कात समझ कर हर साल मुनअ़क़िद करता हूं और क़ियाम में लुत्फ़ व लज़्ज़त पाता हूं। (फ़ैसला हफ्त मसला सफ़हा ८)

अजीब बात है कि पीर व मुरशिद तो मौलूद शरीफ़ को ज़रिअ़ऐ बरकात समझ कर हर साल करते हैं और क़ियाम में लुत्फ़ व लज़्ज़त पाते हैं। मगर मुरीदीन व मोतक़िदीन उन बातों को शिर्क व कुफ़्र कहते हैं तो न मालूम पीर साहब पर वह क्या फ़त्वा लगाते हैं।

अगूँठा चूमना

अज़ान में हुज़ूर पुरनूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का नामे मुबारक सुन कर अगूँठा चूमना और आँखों से लगाना मुस्तहब है। हज़रत अल्लामा इब्ने आबिदीन शामी रहमतुल्लाहि तआला अलैहि रद्दुलमुहतार जिल्द १ सफ़ाह २६७ में लिखते हैं।

मुस्तहब है कि जब अज़ान में पहली बार अश्हदु अन्न मुहम्मदर्रसूलुल्लाहि सुने तो सल्लल्लाहु अलैक या रसूलल्लाह कहे और जब दूसरी बार सुने तो क़ुर्रतु अैनीबिक या रसूलल्लाह और फिर कहे अल्ला हुम्म मत्तेअनी बिस्समइ वल बसिरि—और यह कहना अगूंठों के नाख़ुन आँखों पर रखने के बाद हो-सरकारे अक़दस सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम अपनी रिकाबे अक़दस में उसे जन्नत में ले जायेंगे ऐसा ही कनज़ुलइबाद में है। यह मज़मून जामेउर्रमूज़ अल्लामा क़हसतानी का है और इसी के मिस्ल फ़तावा सूफ़िया में है। और सय्यिदुल उलमा हज़रत सय्यिद अहमद तहतावी रहमतुल्लाहि तआला अलैह ने अल्लामा शामी के मिस्ल लिखने के बाद फ़रमाया कि दैलमी ने किताबुलफ़िरदौस में हज़रते अबूबकर सिद्दीक़

रज़ियल्लाहु तआ़ाला अ़नहू की ह़दीसे मरफ़ूअ़ को ज़िक्र फ़रमाया-सरकारे अक़दस स़ल्लल्लाहु तआ़ाला अ़लैहि वसल्लम इरशाद फ़रमाते हैं कि जो मुअज़्ज़िन के अश्हदु अन्न मुह़म्मदर्रसूलुल्लाहि कहते वक्त शहादत की उँगलियों के पेट को चूमने के बाद आंखों पर फेरे और "अश्हदुअन्न मुह़म्मदन अ़ब्दु हु व रसूलुहू, रज़ीतु बिल्लाहि रब्बन व बिल इस्लामि दीनन व बिमुह़म्मदिन सल्लल्लाहु तआ़ाला अ़लैहि वसल्लम नबीयन" कहे तो उसके लिए मेरी शफ़ाअ़त ह़लाल हो गई और ऐसे ही ह़ज़रते ख़िज़िर अ़लैहिस्सलाम से रिवायत की गई है—और इस क़िस्म की ह़दीसों पर फ़ज़ाइल में अ़मल किया जाता है—(तह़तावी अ़लल्मराक़ी मतबुआ़ क़ुस्तुन तुनया स़फ़ह़ा १११)

ह़ज़रते मुल्ला अ़लीक़ारी मौज़ूआ़ते कबीर में फ़रमाते हैं कि जब इस ह़दीस का रफ़अ़ ह़ज़रते सिद्दी के अकबर रज़ियल्लाहु तआ़ाला अ़नहू तक साबित है तो अ़मल के लिए काफ़ी है इसलिए कि ह़ुज़ूर अ़लैहि-स्सलातु वस्सलाम ने फ़रमाया कि तुम पर मेरी और मेरे ख़ुलाफ़ाये राशिदीन की सुन्नत पर अ़मल करना लाज़िम है।

उलमाये शाफ़िई और उलामाये मालिकी ने भी अँगूठा चूमने को जाइज़ ठहराया है और उसका फ़ायदा भी बयान किया है—मज़हबे-शाफ़िई की मशहूर किताब—"इआनतुत्तालिबीन "और मज़हबे मालिकी की मशहूर किताब "कफ़ायतुत्तालिबुर्रब्बानी,, में हैं। "फिर अपने अँगूठों को चूमे और आँखों से लगाये तो कभी अंधा न होगा और न कभी आँखें दुखेंगी"।

बुज़ुर्गों ने अँगूठा चूमने के नीचे लिखे गये फ़ाइदे बयान फ़रमाये हैं—

(१) इस पर अमल करने वाले को हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम की शफ़ाअत नसीब होगी—

(२) अँगूठा चूमने वालों को हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम अपने पीछे जन्नत में ले जाएंगे।

(३) यह काम करने वाला आँख दुखने से महफ़ूज़ रहेगा और इन्शा अल्लाह कभी अंधा न होगा।

(४) आँख में किसी क़िस्म की तकलीफ़ हो तो अँगूठा चूमने का अमल बेहतरीन इलाज है।

नोट :—अह़ादीसे करीमह में तकबीर को भी अज़ान कहा गया है लिहाज़ा तकबीर में भी अँगूठा चूमना नफ़ा बख़्श व बाइ़से बरकत है और अज़ान व तकबीर के एलावा भी ह़ुज़ूर स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम का नामे मुबारक सुनकर अँगूठा चूमना जाइज़ व मुस्तह़सन है। कि उसमें ह़ुज़ूर अ़लैहिस्स़लातु वस्स-लाम की ताज़ीम भी है—और ह़ुज़ूर की ताज़ीम जिस तरह़ भी की जाये बाइ़से सवाब है—

औलियाये किराम की नज़्र

नज़्र की दो क़िस्में है 'फ़िक़ही, और उ़रफ़ी, नज़्र फ़िक़ही के माना हैं ग़ैर ज़रूरी इबादत को अपने लिए ज़ुरूरी कर लेना। और उ़रफ़ी के माना हैं नज़्राना, हदया और नियाज़-नज़्रफ़िक़ही ख़ुदाये तआ़ला के सिवा किसी की मानना जाइज़ नहीं। और नज़्र उ़रफ़ी, जो बुज़ुर्गाने दीन के लिए उनकी ज़ाहिरी ज़िन्दगी या बातिनी ज़िदगी में पेश की जाती है जाइज़ हैं ह़ज़रत शाह अ़ब्दुल अ़ज़ीज़ स़ाह़ब मुह़द्दिस देहल्वी के भाई ह़ज़रत शाह रफ़ीउ़द्दीन स़ाह़ब "रिसालये नुज़ूर" में लिखते हैं—

लफ़्ज़े नज़्र जो कि यहां बोला जाता है। शरई माना पर नहीं है इसलिए कि उ़र्फ़ में जो कुछ बुज़ुर्गों के यहाँ ले जाते हैं नज़्र वनियाज़ कहते हैं।

ह़ज़रते अ़ल्लामा अ़ब्दुलग़नी नाबलसी कुद्दिस सिर्रहु ह़दीक़ये नदीया में लिखते हैं। इसी क़बील से है क़बरों की ज़ियारत करना और औलियाय किराम व बुज़ुर्गानेदीन के मज़ारात से बरकत ह़ासिल करना और बीमार की शिफ़ा या मुसाफ़िर के आने पर औलियाये गुज़श्तह के लिए नज़्र मानना कि वह उन की क़बरों की ख़िदमत करने वालों पर स़द्क़ा करने से मजाज़ है।

ह़ज़रत अबुलह़सन नूरूल मिल्लति वद्दीन अ़ली इब्ने यूसुफ़ शतनूफ़ी क़ुद्दिस सिर्रहुल अ़ज़ीज़ जिनको शम्सुद्दीन ज़हबी ने तबक़ातुल क़ुर्रा में और इमाम जलालुद्दीन सियूती ने ह़ुसनुल मुह़ाज़रह में इमामुल औह़द यानी बेनज़ीर इमाम कहा है वह अपनी किताब बहजतुल असरार शरीफ़ में मुह़द्दिसाना असानीदे सह़ीह़ा मोतबरा से रिवायत करते हैं कि—अबुल अ़फ़ाफ़ मूसा इब्ने उ़स्मान ने सन् ६६३ हिजरी में हम से शहर क़ाहिरा में ह़दीस बयान की कि मेरे

वालिदे माजिद अबुलमआ़नी उ़स्मान ने हमें सन् ६१४ हिजरी में शहरे दमिश्क़ में ख़बर दी कि हमें दो बुज़ुर्ग ह़ज़रत अबू अ़म्र उ़स्मान शरीफ़ीनी और ह़ज़रत अबू मुह़म्मद अ़ब्दुलह़क़ ह़रीमी ने सन् ५५९ हिजरी में बग़दाद शरीफ़ में ख़बर दी कि हम ३ सफ़र रोज़ यकशंबा (इत्तवार) सन् ५५५ हिजरी में ह़ज़रत सय्यिदिना ग़ौसे आज़म रज़ियल्लाहु तआ़ला अनहू के दरबार में हाज़िर थे कि—

ह़ज़रत ने वज़ू करके खड़ाऊँ पहनी और दो रकअ़त नमाज़ पढ़ी सलाम के बाद एक अ़ज़ीम नारा मारा और एक खड़ाऊँ हवा में फेंकी—फिर दूसरा नारा मारा और दूसरी खड़ाऊँ फेंकी—वह दोनों हमारी निगाहों से ग़ाइब हो गईं—फिर ह़ज़रत ने तशरीफ़ रक्खी मगर हैबत के सबब किसी को पूछने की हिम्मत न हुई २३ दिन के बाद अ़जम से एक क़ाफ़िला हाज़िरे बारगाह हुआ और कहा कि हमारे पास ह़ज़रत की कुछ नज़्र है। हमने ह़ज़रत से उस नज़्र के लेने में इजाज़त मांगी ह़ज़रत ने फ़रमाया ले लो। उन्होंने एक मन रेशम, ख़ुज़ के थान, सोना और ह़ज़रत की खड़ाऊँ जो उस रोज हवा में फेंकी थी पेश की। हमने उनसे पूछा यह खड़ाऊँ तुम्हारे पास

कहाँ से आई। उन्होंने कहा हम सफ़र के महीना की ३ तारीख़ इत्तवार के दिन सफर में थे कि बहुत से डाकू दो सरदारों के साथ हम पर टूट पड़े। हमारे माल लूट लिए और कुछ आदमियों को क़त्ल कर दिया फिर एक नाले में माल बांटने के लिए उतरे। नाले के किनारे हम थे। हमने कहा बेहतर हो कि इस वक़्त हम हज़रते ग़ौसे आज़म को याद करें और नजात पाने पर कुछ माल हज़रत के लिए नज़्र मानें।

हमने हज़रत को याद ही किया था कि दो अज़ीम नारे सुने गये जिनसे जंगल गूंज उठा और हमने डाकुओं को देखा कि उन पर डर छा गया— हम समझे कि उन पर कोई और डाकू आ पड़े--वह भागकर हमारे पास आये और बोले अपना माल ले लो और देखो हम पर कैसी मुसीबत आपड़ी। हमें अपने दोनों सरदारों के पास ले गये। हमने देखा वह मरे पड़े हैं और हर एक के पास एक खड़ाऊँ पानी से भीगी हुई रक्खी है। डाकुओं ने हमारे सब माल हमें वापस कर दिए और कहा इस वाक़िआ की कोई अज़ीमुश्शान ख़बर है।

और बहजतुल असरार शरीफ़ में है कि हदीस

बयान की हमसे नसरुल्लाह इब्ने यूसुफ़ अज़जी ने उन्होंने कहा हमें शैख़ अबुल अब्बास अह़मद इब्ने इस्माईल ने ख़बर दी उन्होंने कहा हमें शैख़ अबुमुह़म्मद अ़ब्दुल्लाह इब्ने हुसैन इब्ने अबुल फ़ज़्ल ने ख़बर दी कि ह़मारे शैख़ हज़रत ग़ौसे आज़म रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू नज़रें क़बूल फ़रमाते और बज़ाते ख़ुद उसमें से खाते।

देखिए अगर यह नज़्र फ़िक़ही होती तो ह़ज़रते ग़ौसे आज़म रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू जो सय्यिदों में से हैं उसमें से हरगिज़ न खाते कि सय्यिदों के लिए नज़्र फ़िक़्ही में से खाना जाइज़ नहीं इसलिए कि उसे वही खा सकता है जो ज़कात ले सकता है।

और आ़रिफ़े बिल्लाह ह़ज़रत अ़ब्दुलवह्हाब शा'रानी क़ुद्दिस सिर्रुहू "तबक़ाते कुबरा" में ह़ज़रत अबुल मवाहिब मुह़म्मद शाज़ली रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू के ह़ालात में लिखते हैं ह़ज़रत अबुल मवाहिब मुह़म्मद शाज़ली रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू फ़रमाया करते थे कि मैंने सरकारे अक़्दस स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम को देखा हुज़ूर ने फ़रमाया जब तुम्हें कोई ह़ाजत पेश आये और चाहो कि वह पूरी हो

जाये तो सय्यिदह ताहिरा हज़रते नफ़ीसा के लिए कुछ नज़्र मान लिया करो अगरचे एक ही पैसा हो तुम्हारी ह़ाजत पूरी होगी।

साबित हुआ कि औलियाय किराम की नज़्र, नज़्रे फ़िक़्ही नहीं है बल्कि नज़्रे उ़र्फ़ी है इसे सय्यिद और अमीर, ग़रीब सब लोग ले सकते हैं। और खा सकते हैं।

वहाबियों के पेशवा मौलवी इस्माईल देहलवी के दादा और दादा उस्ताद और पर दादा पीर यानी शाह वलीयुल्लाह साह़ब मुहद्दिस देहलवी अपने पिताजी शाह अब्दुर्रह़ीम साह़ब के ह़ाल में लिखते हैं कि वह क़स्बा डासना ह़ज़रत मख़्दूम इलाह दिया क़ुद्दिस सिर्रुहू के मज़ारे अक़्दस पर ह़ाज़िर हुए रात का वक़्त था पिताजी ने फ़रमाया कि ह़ज़रत मख़्दूम हमारी दावत कर रहे हैं और फ़रमाते हैं कि कुछ खाके जाना-थोड़ी देर ठहर गये जब लोगों का आना जाना बंद हो गया तो एक औ़रत थाली में चावल और शीरीनी लिए ह़ाज़िर हुई और कहा कि मैंने नज़्र मानी थी कि अगर मेरा शौहर आजाएगा तो मैं उसी वक़्त यह खाने पकाकर ह़ज़रत मख़्दूद इलाह

दिया की दरगाह में हाज़िरीन के लिए पहुँचाऊँगी। तो मेरा शौहर इस वक़्त आ गया तो मैं नज़्र पूरी करने के लिए हाज़िर हुई हूँ। (अनफ़ासुल आरिफ़ीन सफ़हा ४८)

और शाह शाहब लिखते हैं कि मेरे पिताशाह अब्दुर्रहीम साहब फ़रमाया करते थे कि फ़रहाद बेग ने किसी मुश्किल के वक़्त मेरी नज़्र मानी मगर वह भूल गये नज़्र पूरी न की तो उनका घोड़ा बीमार हो गया यहाँ तक कि मरने के क़रीब पहुँच गया मुझे मालूम हुआ कि फ़रहादबेग पर यह मुसीबत मेरी नज़्र पूरी न करने के सबब है मैंने कहला भेजा कि घोड़ा बचाना चाहते हो तो हमारी नज़्र पूरी करो। फ़रहाद बेग ने नज़्र पूरी की तो घोड़ा फ़ौरन अच्छा हो गया। (अनफ़ासुल आरिफ़ीन)

मज़कूरा बाला बुज़ुर्गों के अक़वाल व अहवाल से ख़ूब अच्छी तरह ज़ाहिर हो गया कि नज़्र उरफ़ी जो बुज़ुरगों के लिए मानी जाती है बिला शुबहा जाइज़ है। इसे ना जाइज़ और शिर्क कहना बुज़ुर्गों को मुश्रिक और गुनहगार ठहराना है। अलबत्ता

जाहिलों ने कुछ ग़लत मन्नतें जो राइज हैं उनसे बचना ज़रूरी है।

सय्यिदी व मुर्शिदी सदरुश्शरीआ़ ह़ज़रत मौलाना ह़कीम अबुल उ़ला मुह़म्मद अमजदअ़ली साहिब अ़लैहिर्रह़मतु व र्रिज़वान लिखते हैं।

अ़लम और ताज़िया बनाने और पैक बनने और मुह़र्रम में बच्चों को फ़क़ीर बनाने और बध्धी पहनाने और मर्सिया की मज्लिस करने और ताज़िया पर नियाज़ दिलवाने वग़ैरा ख़ुराफ़ात जो रवाफ़िज़ और ताज़ियादार लोग करते हैं उनकी मन्नत सख़्त जहालत है। ऐसी मन्नत न माननी चाहिए और मानी हो तो पूरी न करे। (बहारे शरीअ़त जिल्द ९ सफ़ह़ा ३५)

और लिखते हैं—बाज़ जाहिल औ़रतें लड़कों के कान, नाक छिदने व बच्चों की चोटियाँ रखने की मन्नत मानती हैं। या और तरह़ तरह़ की ऐसी मन्नतें मानती हैं जिनका जवाज़ किसी तरह़ साबित नहीं। अव्वलन ऐसी वाहियात मन्नतों से बचें और मानी हो तो पूरी न करें और शरीअ़त के मुआ़मला

में अपने नख़ (नेकार) ख़्यालात को दख़ल न दें न यह कि हमारे बड़े बूढ़े यूं ही करते चले आये हैं और यह कि पूरी न करेंगे तो बच्चा मर जायेगा। बच्चा मरने वाला होगा तो यह नाजाइज़ मिन्नतें बचा न लेंगी। मन्नत माना करो तो नेक काम—नमाज़, रोज़ह, ख़ैरात, दुरूद शरीफ़, कलिमा शरीफ़, और क़ुर्आन शरीफ़ पढ़ने, फ़क़ीरों को खाना देने कपड़ा पहनाने वग़ैरा की मन्नत मानो। (बहारे शरीअ़त जिल्द ६ सफ़्ह़ा ३५)

तकबीर के वक़्त बैठना

तकबीर के वक़्त बैठने का हुक्म है। खड़ा रहना मकरूह और मना है। फिर जब तकबीर कहने वाला ह़य्य अ़लल फ़लाह़ पर पहुँचे तो उठना चाहिए। इसके बारे में फ़ुक़हाये किराम और ह़दीस की शरह़ लिखने वालों के अक़्वाल नीचे लिखे जाते हैं। फ़तावा आ़लमगीरी जिल्द १ सफ़्ह़ा ५३ में मुज़्मरात से है कि—अगर कोई शख़्स तकबीर के वक़्त आया तो उसे खड़े होकर इन्तिज़ार करना मकरूह है बल्कि बैठ जाये

और जब तकबीर कहने वाला ह़य्य अ़लल फ़लाह़ पर पहुँचे तो उस वक़्त खड़ा हो ।

शैख़ अ़लाउद्दीन मुह़म्मद ह़सकफ़ी दुर्रे मुख़्तार में लिखते हैं कि—जो शख़्स तकबीर कहे जाने के वक़्त मस्जिद में आये तो वह बैठ जाये ।

इसी इ़बारत पर शामी जिल्द १ सफ़ह़ा २६८ में है कि उसके लिए खड़े होकर इन्तिज़ार करना मकरूह है । बल्कि बैठ जाये फिर जब मुअज़्ज़िन ह़य्य अ़लल फ़लाह़ कहे तो उठे ।

और मौलवी अ़ब्दुलह़ई साह़ब फ़रंगी मह़ली उ़म्दतुर्रिआ़यह ह़ाशियह शरहे वक़ा यह जिल्द १ मजीदी सफ़ह़ा १३६ में लिखते हैं कि जो शख़्स मस्जिद के अंदर आये उसे खड़े होकर नमाज़ का इन्तिज़ार करना मकरूह है बल्कि वह किसी जगह बैठ जाये फिर ह़य्य अ़लल फ़लाह़ के वक़्त खड़ा हो । इसकी तसरीह़ जामिउ़ल मुज़मरातमें है ।

और अ़ल्लामा सय्यिद अह़मद तह़तावी अ़ललम-राक़ी मतबूआ़ क़ुस्तुनतुनिया सफ़ह़ा १५१ में लिखते हैं कि मुकब्बिर जब तकबीर कहने लगे और कोई शख़्स

मस्जिद में आये तो वह बैठ जाये। खड़े होकर इन्तिज़ार न करे इसलिए कि तकबीर के वक़्त खड़ा रहना मकरूह है जैसा कि मुज़मराते क़हस्तानी में है और इस हुक्म से समझा जाता है कि शुरू इक़ामत में खड़ा हो जाना मकरूह है और लोग इससे ग़ाफ़िल हैं।

लिहाज़ा जो लोग मस्जिद में मौजूद हैं तकबीर के वक़्त बैठे रहें और जब मुकब्बिर हय्य अ़ललफ़लाह़ पर पहुँचे तो उठें और यही हुक्म इमाम के लिए भी है जैसा कि फ़तावा आलमगीरी जिल्द १ सफ़हा ५३ में है कि **उलमाये सलासा यानी हज़रत इमामे आज़म, इमामे अबू युसुफ़** और **इमामे मुहम्मद** रहमतुल्लाहि तआ़ला अ़लैहिम के नज़दीक इमाम व मुक़तदी उस वक़्त खड़े हों जब कि तकबीर कहने वाला हय्यअ़ल लफ़लाह़ कहे और यही सहीह है।

और दुर्रे मुख़्तार मए रद्दुलमुहतार जिल्द १ सफ़ाहा ३२२ में है कि इमाम और मुक़तदी का हय्य अ़ललफ़लाह़ के वक़्त खड़ा होना सुन्नतेमुस्तहब्बा है।

और शरह़ वक़ाया जिल्द १ मजीदी सफ़हा १३६ में है कि इमाम और मुक़तदी हय्य अ़लस्सलाह़ कहने के वक़्त खड़े हों।

शैख़ हुसन शुरन्बुलाली मराक़िल फ़लाह् में लिखते हैं कि इमाम अगर मिह्राब के पास ह़ाज़िर हो तो इमाम और मुक़तदी का तकबीर कहने वाले के ह़य्य-अ़लल फ़लाह् कहते वक़्त खड़ा होना नमाज़ के आदाब में से है।

और ह़दीस शरीफ़ की मशहूर किताब मुवत्ता इमामे मुहम्मद बाबु तस्वियतिस्सफ़, सफ़ह़ा ८८ में है कि ह़ज़रत इमामे मुह़म्मद शैबानी रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु फ़रमाते हैं कि तकबीर कहने वाला जब ह़य्य-अ़लल फ़लाह् पर पहुँचे तो मुक़तदीयों को चाहिए कि नमाज़ के लिए खड़े हों और फिर सफ़बंदी करते हुए सफ़ों को सीधी करें।

और मुल्ला अ़ली क़ारी मिरक़ात शरह् मिश्कात जिल्द २ सफ़ह़ा ४१५ में लिखते हैं कि हमारे अइम्मये-किराम **हज़रत इमामेआज़म, इमामे अबू यूसुफ़ और इमामे मुहम्मद** रह़मतुल्लाहि तआ़ला अ़लैहिम ने फ़र-माया कि इमाम और मुक़तदी ह़य्य अ़लस्सलाह के वक़्त खड़े हों।

और ह़ज़रत शैख़ अ़ब्दुलहक़ मुह़द्दिस देहलवी

बुख़ारी रह़मतुल्लाहि तअ़ाला अ़लैह अशिअ़तुल्लमअ़ात जिल्द १ स़फ़ह़ा ३२१ में लिखते हैं कि फ़ुक़हाये किराम ने फ़रमाया। मज़हब यह है कि ह़य्य अ़लस्सलाह़ के वक़्त उठना चाहिए।

और नवाब क़ुतबुद्दीन ख़ाँ मिश्कात के उर्दू तर-जमा "मज़ाहिरेह़क़" में लिखते हैं कि "फ़ुक़हा ने लिखा है कि जब तकबीर कहने वाला ह़य्य अ़लस्स़-लाह कहे उस वक़्त मुक़तदी खड़े हों।

और काजी सनाउल्लाह स़ाह़ब पानी पती "माला बुद्दमिन्हू" स़फ़ह़ा ४४ में लिखते हैं कि इमाम ह़य्य अ़लस्सलाह़ के वक्त उठे।

इस इबारत की शरह में मुफ़्ती सादुल्लाह साह़ब लिखते हैं कि इमाम उठे और मुक़तदी भी इसलिए कि ह़य्य अ़लस़्स़लाह़ जो हुक्म है उसे अदा किया जाये।

ह़ज़रत सद्रुश्शरीअ़ह रह़मतुल्लाहि तअ़ाला अ़लैह लिखते हैं। कि इक़ामत के वक़्त कोई शख़्स़ आया तो उसे खड़े होकर इन्तिज़ार करना मकरूह है बल्कि बैठ जाये। तकबीर कहने वाला जब ह़य्य

अ़लल्फ़लाह़ पर पहुँचे उस वक़्त खड़ा हो। यूँ ही जो लोग मस्जिद में मौजूद हों वह बैठे रहें। उस वक़्त उठें जब तकबीर कहने वाला ह़य्य अ़लल्फ़लाह़ पर पहुँचे। यही हुक्म इमाम के लिए भी है। आजकल अक्सर जगह रवाज पड़ गया है कि इक़ामत के वक़्त सब लोग खड़े रहते हैं और बल्कि अक्सर जगह तो यहां तक है कि जब तक इमाम मुसल्ले पर खड़ा न हो उस वक़्त तक तकबीर नहीं कही जाती यह ख़िलाफ़े सुन्नत है। (बहारे शरीअ़त जिल्द ३ सुफ़ह़ा ३४)

फ़ुक़हाये किराम और ह़दीस की शरह करने वालों की मज़कूरा बाला इबारतों से रोज़े रौशन की तरह़ ज़ाहिर हो गया कि इमाम और मुक़्तदी को ह़य्य अ़लल्फ़लाह़ के वक़्त खड़ा होना चाहिए। यह मस्अला फ़िक़ह की अक्सर किताबों में इसी तरह ज़िक्र किया गया है। मगर अफ़सोस कि आज कल बहुत से जाहिल ख़ास़कर वहाबी, देवबंदी इस मस्अला पर अ़मल करने वालों से लड़ते भगड़ने और फ़ितना बरपा करते हैं। ह़ालांकि उनके पेशवाओं ने उर्दू की छोटी-छोटी किताबों में भी इस मस्अलह को इसी तरह़ लिखा है "मिफ्ता-ह़ुलजन्नह सफ़ह़ा ३३ पर है कि जब इक़ामत में ह़य्य

अ़लस़्स़लाह़ कहे तब इमाम और सब लोग खड़े हो जायें और "राहे नजात" स़फ़ह़ा १४ में है कि ह़य्य अ़लस़्स़लाह़ के वक़्त इमाम उठे ।

वहा़बियों, देवबंदियों का अब भी इस मस्अलह की मुख़ालफ़त करना खुली हु़ई हटधरमी है । ख़ुदाय तआ़ला उन्हें ह़क़ क़बूल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये । आमीन या रब्बलआ़लमीन ।

नोट नं० १ कुछ किताबों में ह़य्य अ़लस़्स़लाह़ और कुछ में ह़य्य अ़ललफ़लाह़ पर उठने का हु़क्म है तो ह़य्य अ़लस़्स़लाह़ के आख़िर में उठें और ह़य्य अ़ललफ़लाह़ के शुरू में सीधे खड़े हो जायें इस तरह़ दोनों क़ौल पर अ़मल हो जायेगा । ऐसा ही फ़तावा रिज़वीयह़ जिल्द २ स़फ़ह़ा ४७२ में है ।

नोट नं० २ कुछ लोग जो कहते हैं कि क़द् क़ामतिस़्स़लाह़ पर चूँ कि इमाम को तकबीरे तह़रीमा कह कर नमाज़ शुरू कर देने का हु़क्म है इसलिए अगर लोग ह़य्य अ़लस़्स़लाह़ और ह़य्य अ़ललफ़लाह़ पर उठेंगे तो स़फ़ें सीधी नहीं हो सकेंगी जिनकी ह़दीस शरीफ़ में बहुत ताकीद है । और अगर स़फ़ें सीधी करेंगे तो तकबीरे ऊला छूट जायेगी । इसलिए शुरू

इक़ामत ही से खड़े हो जाना चाहिए। तो इसका जवाब यह है कि क़द् क़ामतिस्सलाह पर इमाम तकबीरे तह्रीमा कह कर नमाज़ शुरू कर दे यह तरफ़ैन के नज़दीक मुस्तहब है और इक़ामत के वक़्त ह़य्य अ़लस्सलाह से पहले खड़ा रहना मकरूह है। जैसा कि फ़तावा आ़लमगीरी, रद्दुलमुह्तार, तह्तावी अ़ला मराक़ी और उ़म्दतुर्रिआ़यह के हवाले से पहले गुज़र चुका है। तो अगर मुक़्तदी हज़रात इस कराहत से बच कर तकबीरे ऊला न पा सकें तो इमाम को चहिए कि तकबीरे तह्रीमा बाद में कहे। इसलिए कि तकबीरे तह्रीमा इक़ामत ख़त्म होने के बाद कहने में तीन फ़ायदे हैं।

(१) इमाम और मुक़तदी दोनों मुअज़्ज़िन की पूरी इक़ामत का जवाब दे सकेंगे जो मुस्तह़ब है।

(२) मुअज़्ज़िन इक़ामत से फ़ारिग़ होकर तकबीरे ऊला पा सकेगा और यह भी मुस्तह़ब है।

(३) मुक़तदी कराहत से बचकर सफ़ें सीधी कर लेंगे।

और अगर इमाम मुस्तह़ब पर अमल करते हुए क़द् क़ामतिस्सलाह पर तकबीरे तह्रीमा कह कर

नमाज़ शुरू कर देगा तो खुद इमाम और सब मुक़्त-दीयों को एक दूसरे मुस्तह़ब का छोड़ना लाज़िम आयेगा कि उनमें कोई इक़ामत का पूरा जवाब न दे सकेगा और दूसरे यह कि मुअज़्ज़िन तकबीरे ऊला न पा सकेगा। और तीसरे यह कि मुक़्तदीयों को सफें सीधी करने के लिए हय्य अलस्सलाह से पहले खड़े होकर मकरूह काम करना पड़ेगा। तो मुस्तह़ब के लिए मकरूह काम के करने का हुक्म न किया जायेगा बल्कि इस सूरत में मुस्तह़ब को छोड़ दिया जायेगा। जैसा कि इमाम इब्ने हुमाम फ़तहुल क़दीर जिल्द १ सफ़हा २०८ में लिखते हैं कि जब मुस्तह़ब काम करने से मकरूह काम करना पड़े तो इस सूरत में मुस्तह़ब छोड़ दिया जायेगा। और जबकि मकरूह काम करने के साथ दूसरे मुस्तह़ब का छोड़ना भी लाज़िम आता है तो बदरजये औला मुस्तह़ब पर अमल न किया जायेगा। इसीलिए जुमहूर और अहले ह़रमैन का अमल ह़ज़रत इमाम अबूयूसुफ़ के क़ौल पर है। यानी इमाम क़द क़ामतिस्सलाह पर तकबीरे तहरीमा नहीं कहता बल्कि इक़ामत के ख़त्म होने के बाद नमाज़ शुरू करता है। इसी तरह शरहे नुक़ायह जिल्द १ सफ़हा ६३ में है।

और सफ़ों की दुरुस्तगी का इहतिमाम हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम से इक़ामत के बाद भी साबित है जैसा कि हज़रत नोमान इब्ने बशीर रज़ियल्लाहु तआला अनहु से रिवायत है उन्होंने फ़रमाया कि हुज़ूर नमाज़ के लिए खड़े हुए और क़रीब था कि तकबीरेतहरीमा कहते कि आपने एक शख़्स को देखा जिस का सीना सफ़ से बाहर निकला हुआ था तो हुज़ूर ने फ़रमाया ख़ुदा के बंदो अपनी सफ़ों को बराबर करो। यह हदीस मिशकात शरीफ़ सफ़हा ९७ में है। जिसे इमाम मुस्लिम ने रिवायत किया है।

और हज़रत उमर फ़ारूके आज़म व हज़रत उस्मानेगनी रज़ियल्लाहु तआला अनहुमा के बारे में रिवायत है कि यह हज़रात भी इक़ामत ख़त्म होने के बावजूद तकबीरेतहरीमा न कहते बल्कि सफ़ों की दुरुस्तगी की ख़बर मिलती तो नमाज़ शुरू फ़रमाते यह हदीसमवत्ता इमामेमुहम्मद मतबुआ देव बंद सफ़हा ८८ में है।

ख़ुत्बा की अज़ान मस्जिद के बाहर सुन्नत है

हदीस की मुअतबर किताब अबूदाऊद शरीफ़ जिल्द अव्वल सफ़हा १६२ में है कि हज़रते साइबइबने यज़ीद रज़ियल्लाहु तआला अनहु से रिवायत है उन्होंने फ़रमाया कि जब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम जुमा के रोज़ मिम्बर पर तशरीफ रखते तो हुज़ूर के सामने मस्जिद के दरवाज़ा पर अज़ान होती और ऐसा ही हज़रतेअबू बकर व उमर रज़ियल्लाहु तआला अनहुमा के जमाना में।

इस हदीस शरीफ़ से वाज़ेह तौर पर मालूम हुआ कि ख़ुत्बा की अज़ान मस्जिद के बाहर पढ़ना सुन्नत है हुज़ूर अलैहिस्सलातु वस्सलाम और हज़रते अबूबकर व उमर रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा के ज़माने में ख़ुत्बा की अज़ान मस्जिद के बाहर ही हुआ करती थी इसीलिए फ़ुकहाय किराम मस्जिद के अन्दर अज़ान पढ़ने को मना फ़रमाते हैं। फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ जिल्द १ सफ़हा ७८ फ़तावाआलमगीरी जिल्द १ सफ़हा ५५ और बहरुर्राइक़ जिल्द १ सफ़हा २६८ में है कि

फ़ुक़हाय किराम ने फ़रमाया कि मस्जिद में अज़ान न दी जाये और तहतावी अलामराक़िल-फ़लाह सफ़्हा २१७ में है कि मस्जिद में अज़ान देना मकरूह है इसी तरह क़ुहमतानी में नज़्म सेहै।

लिहाज़ा यह जो रवाज हो गया है कि ख़ुत्बा की अज़ान मस्जिद के अन्दर दी जाती है ग़लत है। ख़ुदाय तआला मुसलमानों को तौफ़ीक़ अता फ़रमाये कि इस ग़लत रवाज को छोड़ कर हदीस व फ़िक़्ह पर अमल करें। आमीन।

बुज़ुर्गों के हाथ पाँव चूमना

बुज़ुर्गों के हाथपाँव चूमना जाइज़ है इसे नाजाइज़ कहना जहालत व नादानी है कि सहाबयेकिराम ने हुज़ूर सय्यिदे आलम सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के हाथ और पाँव को चूमा है हदीस शरीफ़ में है कि हज़रते ज़ारेअ रज़ियल्लाहु तआला अनहू जो वफ़्दे अब्दुलक़ैस में शामिल थे। वह फ़रमाते हैं कि जब हम मदीना में आये तो जल्द-जल्द अपनी सवारियों से उतर पड़े और हमने हुज़ूर अलैहिस्सलातुवस्सलाम के हाथ और पाँव को चूमा।

(अबूदाऊद, मिशकात सफ़्हा ४०६)

इस हदीस की शरह में हज़रत शैख़अब्दुल्लहक़ मुहद्दिस देहलवीबुख़ारी रहमतुल्लाहि तआला अलैहि लिखते हैं कि इस हदीस शरीफ़ से पाँव चूमने का जाइज़ होना साबित हुआ (अशिअतुल्लम्आत जिल्द ४ सफ़हा ७५)

और अल्लामा इब्नेअली हस्कफ़ी दुर्रे मुख़्तार बाबुल इसतिबरा में लिखते है कि बरकत के लिए आलिम और परहेज़गार आदमी का हाथ चूमना जाइज़ है ।

और फ़तावा आलमगीरी जिल्द १ सफ़हा ३२१ में है कि अगर इल्म और अद्ल की वजह से आलिम और आदिल बादशाह के हाथ चूमे तो जाइज़ है ।

और हज़रते शैखअब्दुलहक़ मुहद्दिस देहलवी बुखारी रहमतुल्लाहि तआला अलैहि अशिअतुल्लम्आत जिल्द ४ सफ़हा ७१ पर लिखते हैं कि परहेज़गार आलिम के हाथ को चूमना जाइज़ है और कुछ लोगों ने कहा कि मुस्तहब है । और जो लोग कि मुसाफ़हा के बाद अपना हाथ चूमते हैं कोई चीज नहीं, जाहिलों का फ़ेल है और मकरुह है ।

फिर आगे फ़रमाते हैं कि दीन की इ़ज़्ज़त और इ़ल्म व अ़दालत की वजह से परहेज़गार आ़लिम और आ़दिल बादशाह के हाथ चूमे तो जाइज़ है और अगर दुनियावी ग़रज़ के लिए ऐसा करे तो सख़्त मकरूह है।

मुख़ालिफ़ीन के पेशवा मौलवी रशीद अह़मद गंगोही फ़तावा रशीदियह जिल्द १ किताबुल ह़ज़्र वल्इबाह़त सफ़ह़ा ५४ में लिखते हैं।

"ताज़ीमे दीनदार को खड़ा होना दुरुस्त (जाइज़) है और पाँव चूमना ऐसे ही शख़्स का भी दुरुस्तु (जाइज़) है। ह़दीस से साबित है। फ़क़त रशीद अह़मद उ़फ़िय अ़नहू।

इन इबारात से रोज़े रौशन की तरह़ ज़ाहिर हो गया कि दीनदार आ़लिम और परहेज़गार आदमी का हाथ पैर चूमना जाइज़ है।

सवाब बख़्शना और फ़ातिह़ा करना

सवाब बख़्शना और फ़ातिह़ा पढ़ना जैसा कि मुसलमानों में राइज है बिला शुबह़ा जाइज़ और मुस्तह़सन है ह़दीस शरीफ़ में है कि ह़ज़रते सअ़द

इबने उ़बादह रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू से मरवी है कि उन्होंने हुज़ूर अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम से अर्ज़ किया कि उम्मे सअ़द यानी मेरी माँ का इन्तिक़ाल हो गया है उनके लिए कौन सा सद्क़ह अफ़ज़ल है सरकारे अक़दस ने फ़रमाया पानी, तो हज़रते सअ़द रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू ने कुंआँ खुदवाया और कहा कि यह कुंआँ सअ़द की माँ के लिए है यानी इसका सवाब उनकी रूह़ को मिले (अबूदाऊद,-"नसई, मिशकात सफ़्हा १६६)

इस हदीस शरीफ से कई बातें वाज़ेहतौर पर मालूम हुईं ।

(१) मैयित को किसी अच्छे काम का सवाब बख़्शना बेहतर है कि सहाबिये रसूल ने कुआँ खोदने का सवाब अपनी माँ को बख़्शा ।

(२) सवाब बख़्शने के अलफ़ाज़ ज़ुबान से कहना सहाबी की सुन्नत है कि कुआँ खोदने के बाद उन्होंने फरमाया यह कुआँ सअ़द की माँ के लिए है यानी इसका सवाब उनकी रूह को मिले ।

(३) खाना या शीरीनी वग़ैरा को सामने रख

कर सवाब बख़्शना जाइज़ है। इसलिए कि ह़ज़रते सअ़द रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु ने क़रीब के इशारे का लफ़्ज़ बोलते हुए फ़रमाया यह कुआँ सअ़द की माँ के लिए है जिससे मालूम हुआ कि कुआँ उनके सामने था।

(४) ग़रीब व मिस्कीन को खाना वग़ैरा देने से पहले भी सवाब बख़्शना जाइज़ है जैसा कि सह़ाबिये रसूल ने किया कि कुआँ तैयार होने के साथ ही उन्होंने सवाब बख़्श दिया हालाँकि लोगों के पानी पीने पर सवाब मिलेगा। इसी तरह अगरचे ग़रीब व मिस्कीन को खाना देने पर सवाब मिलेगा लेकिन इस सवाब को पहले ही बख़्श देना भी जाइज़ है।

और बुज़ुर्गाने दीन के मज़ारों और अ... मुमिनीन की क़ब्रों पर फ़ातिह़ा का जो तरीक़ा राइज है कि मुख़्तलिफ़ जगह से क़ुर्आनमजीद की कुछ सूरतें और आयतें पढ़ी जाती हैं फिर सवाब बख़्शा जाता है। बिला शुबहा जाइज़ व मुस्तह़सन है। इसी तरह पाँचों वक़्त नमाज़ों से फ़ारिग़ होकर दुआ़ओं में अल्फ़ातिह़ा के बाद सूरए इख़्लास वग़ैरा पढ़कर सवाब बख़्शना जैसा कि बम्बई वग़ैरा में राइज हैं बेहतर है इसलिए

कि सवाब बख़्शने वाले और जिन को सवाब बख़्शा जाता है दोनों सवाब के मुस्तहिक़ होते हैं ।

दुर्रेमुख़्तार बहसे क़िरात लिलमैयित में है कि । हदीस शरीफ़ में है जो शख़्स ग्यारह बार सूरये इख़्लास पढ़े फिर उसका सवाब मुर्दों को बख़्शे तो उसको तमाम मुरदों के बराबर सवाब मिलेगा ।

और रद्दुलमुहतार शामी में इसी जगह शरहुल्लुबाब से है कि जो मुमकिन हो क़ुर्आन पढ़े यानी सूरये फ़ातिहा, सूरये बक़रा की पहली आयतें, आयतुल कुर्सी, सूरये बक़रा की आखिरी आयतें, सूरये यासीन, सूरये मुल्क, सूरये तकासुर पढ़े, और सूरये इख़्लास बारह-ग्यारह, सात या तीन बार पढे फिर कहे कि या अल्लाह जो कुछ मैंने पढ़ा उसका सवाब फ़ुलाँ को या लोगों को पहुँचा दे ।

और जो खाना व मालीदह वग़ैरह बनाकर इमामैन करीमैन हज़राते हस्नैन रज़ियल्लाहु तआला अन्हुमा या किसी दूसरे बुज़ुर्ग की नियाज़ करते हैं वह भी जाइज़ बाइसे बरकत है । जैसा कि हज़रत शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब मुहद्दिस देहलवी फ़तावा अज़ीज़िया जिल्द १ सफ़हा ७८ में फ़रमाते हैं कि

जोखाना कि हज़रात हस्नैन को नियाज़ करें उस पर फ़ातिहा, कुल, और दुरूद शरीफ़ पढ़ना बाइसे बरकत है और उसका खाना बहुत अच्छा है।

और इसी फ़तावा अ़ज़ीज़िया जिल्द १ सफ़हा ५० में है कि अगर मालीदा और चावलों की खीर किसी बुज़ुर्ग के फ़ातिहा के लिए सवाब पहुँचाने की नीयत से पकाकर खिलाये तो कोई मुज़ायक़ा नहीं है जाइज़ है।

फिर आगे लिखते हैं कि अगर फ़ातिहा किसी बुज़ुर्ग के नाम किया गया तो मालदारों को भी उसमें से खाना जाइज़ है।

और आजकल फ़ातिहा व नियाज़ की जो सूरत आमतौर पर राइज है वह भी जाइज़ है। जैसा कि हाजी इम्दादुल्लाह साहब मुहाजिरे मक्की जिन्हें देव बंदी लोग अपना पीर, दादा पीर और परदादा पीर मानते हैं वह लिखते हैं।

"बल्कि अगर कोई मस्लहत बाइसे तक़ईदे हयअते कज़ाईया है तो कुछ हर्ज नहीं जैसा कि बमस्लहत नमाज़ में सूरये ख़ास मुअय्यन करने को फ़ुक़हाये मुहक़्क़िक़ीन ने जाइज़ रखा है। और

तहज्जुद में अक्सर मशाइख़ का मामूल है और तअम्मुल से यूं मालूम होता है कि सलफ़ में तो यह आदत थी मसलन खाना पकाकर मिस्कीन को खिला दिया और दिल से ईसाले सवाब की नीयत करली मुतअख़्ख़िरीन ने यह ख़्याल किया कि जैसे नमाज़ में नीयत हरचंद दिल से काफ़ी है मगर मुआफ़क़ते क़ल्ब व लिसान के लिए अवाम को ज़ुबान से कहना भी मुस्तहसन है इसी तरह अगर यहाँ ज़ुबान से कह लिया जाये कि या अल्लाह ! इस खाने का सवाब फ़ुलाँ शख़्स को पहुँच जाये तो बेहतर है फ़िर किसी को ख़्याल हुआ कि लफ़्ज़ इसका मुशारुन इलैह अगर रूबरू मौजूद हो तो ज़्यादह इस्तिहज़ारे क़ल्ब हो तो खाना रूबरू लाने लगे । किसी को यह ख़्याल हुआ यह एक दुआ है इसके साथ अगर कुछ कलामे इलाही भी पढ़ा जाये तो क़बूलियते दुआ की भी उम्मीद है कि इस कलाम का सवाब भी पहुँच जाये कि जमा बैनल इबादतैन है । चे ख़ुशबुवद बरआयद बयककिरिशमा दो कार । क़ुर्आन की बाज़ सूरतें भी जो लफ़्ज़ों में मुख़्तसर और सवाब में बहुत ज़्यादा हैं पढ़ी जाने लगीं किसी ने ख़्याल किया कि दुआ के लिए रफ़ए यदैन सुन्नत है हाथ भी उठाने लगे किसी

ने ख़्याल किया कि खाना जो मिस्कीन को दिया जायेगा उसके साथ पानी देना भी मुस्तहसन है कि पानी पिलाना बड़ा सवाब है उस पानी को भी खाने के साथ रख लिया पस हैअते कज़ाईया हासिल हो गई (फ़ैसला हफ़्त मस्अला सफ़हा ६)

फिर हाजी साहब आगे लिखते हैं। "और ग्यारहवीं शरीफ़ हज़रते ग़ौसेपाक क़ुद्दिस सिर्रुहू और दसवाँ, बीसवाँ चेहलुम व शश्माही व सालियानह वग़ैरह और तोशा हज़रते शैख़ अहमद अब्दुलहक़ रुदौलवी रहमतुल्लाहि तआला अलैहि और सिह मनी हज़रत शाह बू अली क़लन्दर रहमतुल्लाहि तआला अलैहि व हलवाये शबे बराअत व दीगर सवाब के काम इसी क़ाइदा पर मब्नी हैं (फ़ैसला हफ़्त मस्अला सफ़हा ७)

हाजी साहब ने फ़ैसला कर दिया कि फ़ातिहा व नियाज़ की मुरव्वजा सूरत और दस्वाँ, बीसवाँ, वग़ैरह जाइज़ हैं। अब भी इन बातों को नाजाइज़ कहना देव बंदियों की खुली हुई हट धरमी है और हाज़ी साहब को गुनहगार ठहराना है।

फ़ातिह़ा का आसान तरीक़ा

पहले तीन या पाँच या सात बार दुरूद शरीफ़ पढ़े फ़िर कम से कम चारों क़ुल, सूरये फ़ातिह़ा और सूरये बक़रा की शुरू की आयतें पढ़े फिर आख़िर में तीन या पाँच या सात बार दुरूद शरीफ़ पढ़े और बारगाहे इलाही में हाथ उठा कर युँ दुआ़ करे।

या अल्लाह ! हमने जो कुछ दुरूद शरीफ़ पढ़ा है और क़ुर्आन मजीद की आयतें तिलावत की हैं उनका सवाब (अगर शीरीनी या खाना हो तो इतना और कहे कि इस खाने और शीरीनी का सवाब) मेरी जानिब से ह़ुज़ूर स़ल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम को नज़्र पहुँचा दे फिर उनके वसीला से जुमला अंबियायकिराम अ़लैहि मुस्सलाम व सह़ाबा और तमाम औलिया व उ़लमा को अ़ता फ़रमा (फिर अगर किसी ख़ास बुज़ुर्ग को सवाब बख़्शना हो तो उनका नाम ख़ास़तौर से ले जैसे यूं कहे कि ख़ास़तौर पर ह़ज़रते ग़ौसे पाक रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़नहू को नज़्र पहुँचा दे) और फिर जुमला मूमिनीन व मूम्निात की रूहों को सवाब अ़ता फ़रमा।

और किसी आम आदमी को सवाब बख़्शना हो तो उसका ज़िक्र ख़ास तौर से करे। जैसे यूँ कहै कि ख़ास तौर से हमारे माँ बाप की रूहों को सवाब पहुँचा दे और फिर जुमला मूमिनीन व मूमिनात की रूहों को सवाब अ़ता फ़रमा।

आमीन या रब्बल आ़लमीन बिरह़मति क या अरह़मर्राह़िमीन

उर्दू वग़ैरा में ख़ुतबा

ई़द व बक़रीद और जुमा का ख़ुतबा अ़रबी में होना चाहिए। इसके एलावह उर्दू वग़ैरा किसी दूसरी ज़ुबान में पढ़ना या दूसरी ज़ुबान को अ़रबी के साथ मिला के पढ़ना सुन्नते मुतवारिसा के ख़िलाफ़ है और मकरूह व बिदअ़ते सैयिआ है।

आ़ला ह़ज़रत पेशवाये अहले सुन्नत इमाम अह़मद रज़ा बरैलवी अ़लैहिरह़मतु वरिज़वान ने फ़तावा-रिज़वीया जिल्द ३ पेज ७२५ व ७२६ पर इसके बारे में जो लिखा है उसका ख़ुलासा यह है कि ह़ुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम के ज़माना में और सहाबा ताबिओ़न और तबअ़ ताबिईन वग़ैरा के ज़मानों में

जुमा व ईद व बक़रीद के ख़ुतबे हमेशा सिर्फ़ अरबी ज़ुबान में होते रहे। सहाबा और उनके बाद के ज़मानों में हज़ारों ऐसे शहर फ़तह हुए जहाँ के लोग अरबी नहीं जानते थे मगर कहीं यह रिवायत नहीं है कि अरबी के एलावा किसी दूसरी ज़ुबान में सहाबा वग़ैरा ने ख़ुतबा पढ़ा हो या अरबी के साथ किसी दूसरी ज़ुबान को मिलाई हो हालांकि उनमें बहुत से ऐसे थे जो उन लोगों की ज़ुबानों में बातें किया करते थे। ऐसा ही शाह वलीयुल्लाह साहब मुहद्दिस देहलवी ने मुअत्ता की शरह में लिखा है। और जब कि हाजत के बावजूद दूसरी ज़ुबान में सहाबा वग़ैरा ने ख़ुतबा नहीं पढ़ा तो अब उसके ख़िलाफ़ करना ज़रूर मकरूह होगा।

ख़ुतबा ज़रूर वअ़ज़ व नसीहत के लिए है जैसे नमाज़ कि ज़िक्र के लिए है पारा १६ रुकू १० में है ख़ुदाए तआ़ला ने फ़रमाया कि मेरे ज़िक्र के लिए नमाज़ क़ाइम करो। और ख़ुद क़ुरआने हकीम कि इसका नाम ही ज़िक्र हकीम है और इसके ना समझने पर सख़्त नाराज़गी ज़ाहिर फ़रमाता है जैसा कि पारा २६ रुकू ७ में है तो क्या वह लोग क़ुरआन में ग़ौर व फ़िक्र नहीं करते ? या दिलों पर ताले लगे हुए हैं। तो

जिसकी समझ में अ़रबी न आए उसके लिए न तो नमाज़ में क़ुरआन की तिलावत उर्दू में कर दी जाएगी और न ख़ुतबा। यह उसकी अपनी ग़लती है कि उसका दीन अ़रबी। नबी अ़रबी किताब अ़रबी। फिर अ़रबी इतनी भी न सीखी कि अपना दीन समझ सकता। अंग्रेज़ी वग़ैरा सीखने के लिए जानतोड़ कोशिश करता है कि पैसा कमाने की उम्मीद है और अ़रबी जिसमें दीन है ईमान है उससे कुछ ग़रज़ नहीं। अल्लाह तआ़ला तौफ़ीक़ और हिदायत बख़्शे। आमीन

और देव बन्दियों वहाबियों के पेशवा मोलवी इसमाईल देहलवी की किताब तह कि क़ुल क़ुतबा जो मोलवी शब्बीर अह़मद उ़समानी देवबन्दी के इज़ाफ़ा के साथ क़ुतुब ख़ाना एज़ाज़िया देवबन्द की छपवाई हुई है। उसके शुरू में ख़ुतबा के मुतअ़ल्लिक़ मबसूत, हिदाया, रद्दुलमुह़तार, शरहे इह़याउलउ़लूम, मजमउ़लबिहार और ताजुल अ़रूस फ़ी शरहिल क़ामूस की अ़रबी इबारतों के बाद सफ़ह़ा ८ पर है कि इन तमाम अक़वाले मज़कूरा बाला से यह बात साबित हो गई कि अस्ल ख़ुतबा मुतलक़ ज़िक्र है और ख़ुतबा से मक़सूदे ह़क़ीक़ी और बिज़्ज़ात ज़िक्र के सिवा और कुछ नहीं।

फिर तीन सतर के बाद लिखते हैं कि ख़ुतबा अस्ल लुग़त व शरअ़ में महज़ ज़िक्र का नाम है लेकिन उ़र्फ़ आम और रवाजे मुतआ़रफ़ की वजह से कभी-कभी उसका इत़लाक़ मजाज़न सिर्फ़ वअ़ज व नसीहत पर भी कर दिया जाता है। (तहक़ीक़ुल ख़ुतबा सफ़हा ८)

और फिर लिखते हैं। पस जब ख़ुतबा असल में महज़ ज़िक्र का नाम हुआ तो इसकी ज़रूरत नहीं रही कि ख़तीब कुछ सुन्ने वालों की रिआ़यत से क़ुरआन और रसूल और जन्नत वालों की ज़ुबान छोड़ कर अंग्रेज़ी और जापानी में ख़ुतबा पढ़ो (तहक़ीक़ुल ख़ुतबा सफ़हा ९)

और दारुल उ़लूम देवबन्द के मशहूर मुफ़्ती अज़ीज़ुर्रहमान लिखते हैं कि ख़ुतबए जुमा में उर्दु फ़ारसी व अशआ़रे नज़्मवनस्र पढ़ना मकरूह व बिदअ़त है। जैसा कि हज़रत शाह वलीयुल्लाह साहिब ने मुसव्वा मुसफ़्फ़ा शरहमुअत्ता में तहक़ीक़ फ़रमाया है कि अ़रबी होना ख़ुतबा का सुन्नते मुसतमिर्रा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम और सहाबा का है कभी इसका ख़िलाफ़ सलफ़ से नहीं मनक़ूल

हुआ है। और जो अ़मले मुसतमिर्रा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु तआ़ला अ़लैहि वसल्लम का और सहाबा का हो वह सुन्नत है। उसका ख़िलाफ़ ज़ुरुर बिदअ़त होगा। यह भी हज़रत शाह साहब मौसूफ़ ने तहरीर फ़रमाया कि सहाबा बावजूदे कि बिलादे अ़जम फ़ारस वग़ैरा तशरीफ़ ले गये। और मसाइले दीनी या व अहकामे शरीअ़त उनको उनकी ज़ुबान में तालीम फ़रमाए लेकिन ख़ुतबा में कुछ तग़ैयुर नहीं किया। और इसमें रिआयते मुख़ातबीन की वजह से और इस वजह से कि ख़ुतबा वअ़ज व नसीहत है उनकी ज़ुबानों में तरजमा नहीं किया। यह ऐसा है जैसा कि क़ुरआन शरीफ़ बग़रज़े वअ़ज़ व तज़कीर नाज़िल हुआ है। और क़ुरआन शरीफ़ से तज़कीर मक़सूद है। लेकिन नमाज़ में क़ुरआन शरीफ़ का तरजमा पढ़ना दुरुस्त नहीं। और हदीस शरीफ़ में है कि ख़ुतबा मिस्ल शतरे सलात (यानी आधी नमाज़ के मिस्ल) है। ऐसा ही शामी में है।

अलग़रज़ रिवायते फ़िक़हीया से और अ़मले सहाबा से भी साबित है कि ख़ुतबा में उर्दू फ़ारसी नज़्म व नस्र मकरूह व बिदअ़त है और दरमियान ख़ुतबा

के वअ़ज़ कहना भी ऐसा ही है। (फ़तावा दारुल-उलूम देवबन्द जिल्द १ व २ सफ़ह़ा २६४)

और दारुलउ़लूम के दूसरे मशहूर मुफ़्ती म:शफ़ी साह़ब लिखते हैं कि जुमा के ख़ुतबा के साथ उर्दू में तरजमा ख़ुवाह नस्र से हो या नज़्म से बिदअ़त है और नाजाइज़ है। क़ुरूने मशहूद लहा बिलख़ैर में बावजूदे ज़रूरत और क़ुदरत उसकी कोई नज़ीर नहीं। मुफ़स्सल तहक़ीक़ इस मसला की अहक़र के एक रिसालए मुस्तक़िल में है। अगर तफ़सील मनज़ूर हो तो उसको मुलाहज़ा फ़रमाएं (फ़तावा दारुलउलूम देवबन्द जिल्द १ व २ सफ़ह़ा ३१२)

इन तमाम ह़वालों से रोज़े रौशन की तरह ज़ाहिर हो गया कि ईद व बक़रईद और जुमा का ख़ुतबा सिर्फ़ अ़रबी में होना चाहिए इस पर बरैलवी और देवबन्दी उ़लमा का इत्तिफ़ाक़ है। लिहाज़ा अगर जुमा के दिन लोगों को वअ़ज़ व नसीह़त करना चाहें तो ख़ुतबा की अजान से पहले मुक़ामी ज़ुबान में करें। फिर अज़ान के बाद सिर्फ़ अ़रबी ज़ुबान में ख़ुतबा पढ़ें। इस तरह वअ़ज व नसीह़त का काम भी हो जाएगा और ह़ुज़ूर सरकारे अक़दस स़ल्लल्लाहु

तआला अलैहि वसल्लम व सहाबये किराम की सुन्नत पर भी अमल हो जाएगा। और ईद व बक़रईद में दूसरे खुतबा से फ़ारिग़ होने के बाद या नमाज़ से पहले कामी ज़बान में वअज व नसीहत का काम करें।

□□